यानुस कोर-चौक

आज के समय के लिए एक कथा

ब्रूनो बेटलहाइम

पोलैंड में बच्चों के एक अनाथालय में काम करते हुए यानुस कोर-चौक बच्चों की दुनिया को काफी करीब से समझ रहे थे, वे बच्चों की स्वतंत्रता के हिमायती थे। उन्हें अनाथालय के बच्चों से बेहद प्यार था। उन्होंने इन यहूदी बच्चों का साथ तब भी नहीं छोड़ा जब नाज़ी फौज इन बच्चों को गैस चेंबर में मौत के हवाले कर रही थी।

यहूदी धर्मग्रंथ कहता है: "ईश्वर सदाचारी लोगों की मृत्यु पर खुश होता है।" अगर हम यह पूछें कि आखिर ईश्वर को सदाचारी लोगों की ज़िन्दगी की बजाए मौत क्यों अच्छी लगती है तो यह जवाब दिया जाता है। 'जब तक अच्छे लोग सदाचार का जीवन बिताते हैं, ईश्वर खुश होता है; लेकिन उनके मरने पर ही यह निश्चित हो पाता है कि वे लोग अच्छाई के रास्ते से कभी नहीं हटे।'

हमारे जीवन में जो सदाचारी व्यक्ति हुए उनमें से एक के बारे में तो हम निश्चित ही कह सकते हैं कि उसकी शहादत के बाद ही दुनिया को उसका पता चला, मानो कि वह धर्मग्रंथों की बात प्रमाणित कर रहा हो। खुद ही मृत्यु का वरण करना ही उसके निः स्वार्थ जीवन का आइना बन गया।

यह सदाचारी व्यक्ति था डॉक्टर यानुस कोर-चौक जिसने जर्मन कॉनसेंट्रेशन कैंप में निश्चित मृत्यु से बचाए जाने के तमाम प्रयासों को ठुकरा दिया। उन्होंने उस बदहाली में अनाथ बच्चों का साथ छोड़ने से इंकार कर दिया जिनकी भलाई के लिए उन्होंने

अपना सारा जीवन लगा दिया था – सिर्फ इसलिए कि जब वे मरें तो इंसान की अच्छाई में उनका विश्वास बना रहे। वह इंसान जिसने उनके शरीर का संरक्षण किया था और उनके दिमागों को स्वतंत्र किया था; जिसने गरीबी और दुर्दशा से उन्हें बचाया था और दुनिया में और खुद में आस्था पैदा की थी; जो कि आध्यात्मिक और भौतिक जीवन में उनका पथप्रदर्शक था।

कोर-चौक ने बच्चों का विश्वास बनाए रखने के लिए अपना जीवन न्यौछावर कर दिया जबकि वे आसानी से खुद को बचा सकते थे। उनके कई पोलिश (पोलैंड के रहने वाले) मित्रों ने उन्हें बचाने का प्रस्ताव रखा क्योंकि वे पोलैंड के सांस्कृतिक जीवन में एक प्रतिष्ठित व्यक्ति माने जाते थे। शुभचिंतक उनके लिए एक नकली पहचान पत्र बनाने के लिए तैयार थे। उन्होंने यह भी कोशिश की कि वे वारसा घेट्टो से भाग निकलें। वे बच्चे जिन्हें कोर-चौक ने पाल-पोस कर बड़ा किया था और जो अब स्वतंत्र रूप से बाहर रह रहे थे, वे भी यह कहते हुए उनके पास पहुंचे कि छुटपन में कोर-चौक उनके उद्धारक थे इसलिए अब उन्हें कोर-चौक को बचाने का मौका मिलना चाहिए।

लेकिन कोर-चौक जिन्होंने वारसा में तीस वर्षों से यहूदी यतीमखाने की देखभाल की थी, वे उन बच्चों को छोड़कर जाने को किसी भी शर्त पर तैयार नहीं थे जिन्होंने अपना विश्वास उनमें रखा था। कोर-चौक ने उन शुभचिंतकों को कहा, "एक बीमार बच्चे को रात में अकेला नहीं छोड़ा जाता। इसी तरह ऐसे समय में बच्चों को नहीं छोड़ा जा सकता।"

जर्मनी ने वारसा पर कब्ज़ा करके सारे यहूदियों को एक इलाके में इकट्ठा करके रखा जहां सब को मरना ही था। जिस अनाथालय को कोर-चौक चलाते थे, उसे भी यहीं लाया गया। यह जानते हुए भी कि वहां जाना खतरे से खाली नहीं था, कोर-चौक जर्मन सेना के दफ्तर गए और उस अनाथालय को उसी स्थान पर रहने देने की गुज़ारिश की। जब कहा गया कि उन्हें यहूदी बच्चों की फिक्र नहीं करनी चाहिए और उन्हें अपनी डॉक्टरी सेवा पोलिश मूल के बच्चों को देनी चाहिए तो कोर-चौक ने कहा कि वे यहूदी हैं। इस पर उन्हें जेल में डाल दिया गया और ऐसे ऊटपटांग व्यवहार के लिए उन पर मुकदमा चलाया गया।

अंत की शुरुआत

जैसा कि पहले भी होता आया था और बाद में भी होना था – उनके कुछ पुराने मित्रों ने उनको बचा लिया। उसके बाद वे लोग लगातार कोर-चौक को समझाने की कोशिश करते रहे कि वे घेट्टो से बाहर निकल आएं

और अपनी ज़िन्दगी बचा लें। उनके लिए नकली पहचान पत्र, भागने के रास्ते और छुपने की जगह, सबका इंतज़ाम हो गया। लेकिन कोर-चौक ने यह जानते हुए भी कि वहीं उनका अन्त होगा, बच्चों को छोड़कर जाने से इंकार कर दिया। अब वे उन बच्चों के लिए और ज़्यादा काम करने लगे। अपने पुराने सम्पर्कों और प्रभाव के इस्तेमाल द्वारा बच्चों के लिए भोजन और दवाओं का इंतज़ाम करते रहे। इस काम में उन्हें काफी सफलता मिली। यहां तक कि तस्कर गिरोहों के लोग भी उन्हें जानते थे और बच्चों की भरपूर मदद करते थे।

नाज़ियों ने 6 अगस्त, 1942 को यह आज्ञा दी कि यहूदी अनाथालय के बच्चों को रेल्वे स्टेशन ले जाया जाए। अब तक घेट्टो में रहने वाले लोगों को यह पता चल चुका था कि रेलगाड़ियां बच्चों को ट्रेबलिंका के गैस चैम्बर में, मारने के लिए ले जा रही थीं।

बच्चों के डर को कम करने के लिए कोर-चौक ने उन्हें बताया कि वे सब घूमने जा रहे हैं। निश्चित दिन हाथ में अनाथालय का झंडा लिए सबसे बड़ा बच्चा आगे-आगे चला। हमेशा की तरह कोर-चौक ने यह इंतज़ाम किया था कि एक बच्चा, न कि कोई बड़ा, नेतृत्व प्रदान करे। वे खुद दो सबसे छोटे बच्चों का हाथ पकड़ कर बड़े बच्चे के पीछे-पीछे चल रहे थे। इनके पीछे चले अन्य सब बच्चे, चार-चार के झुंड में पंक्तिबद्ध, पूरे आत्मविश्वास के साथ, जो उन्होंने अनाथालय में आकर पाया था।

जिन लोगों ने उन बच्चों को सीना तान कर जाते हुए देखा, उन्हें लगा मानो वे बच्चे अपने हत्यारों का मूक प्रतिवाद कर रहे थे। जब उनका जुलूस नियत जगह पर पहुंचा, तो पुलिस-कर्मी जो अब तक यहूदियों को गालियां देने और कोड़े बरसाने में व्यस्त थे, अचानक सजग होकर उन्हें सलामी देने लगे। जर्मन एस. एस. ऑफिसर जो उनका कमांडर था, डॉक्टर कोर-चौक और बच्चों के आत्मसम्मान के भाव से इतना प्रभावित हुआ कि वह आश्चर्य से पूछ बैठा, "यह अद्भुत व्यक्ति कौन है?" ऐसा कहा जाता है कि रेल्वे स्टेशन पर भी कोर-चौक को बचाने की कोशिशें हुईं। एक पुलिस वाले ने उन्हें यह बताते हुए चले जाने को कहा कि सिर्फ बच्चों को रेलगाड़ी में चढ़ाने की आज्ञा हुई है। लेकिन कोर-चौक ने बच्चों से अलग होने से मना कर दिया और वे उनके साथ ट्रेबलिंका चले गए।

बूढ़ा डॉक्टर

इसके पहले कई वर्षों से डॉ. यानुस कोर-चौक सारे पोलैंड में 'बूढ़े डॉक्टर' के नाम से प्रसिद्ध थे। यह खिताब उन्होंने, बच्चों की शिक्षा पर रेडियो

प्रसारण करते हुए खुद ही दिया था। रेडियो के माध्यम से वे सब लोग भी उन्हें जान पाए जिन्होंने उनका कोई उपन्यास या नाटक नहीं पढ़ा था। एक उपन्यास के लिए उन्हें पोलैंड का सबसे बड़ा साहित्यिक पुरस्कार मिला था।

कोर-चौक के रेडियो प्रसारण सनसनीखेज साबित हुए क्योंकि उनसे प्रमाणित होता था कि एक वयस्क, एक बच्चे के संसार में आसानी से प्रवेश कर सकता था। कोर-चौक न सिर्फ बच्चों के संसार को समझते थे बल्कि उसकी कदर भी करते थे; जबकि अन्य वयस्क बच्चों की दुनिया के साथ न्याय नहीं कर पाते थे। जो बात कोर-चौक सबसे अच्छे से बता पाए वह भी उनकी एक महत्वपूर्ण कृति के शीर्षक 'बच्चे को कैसे प्यार करना चाहिए' से समझ में आती है।

कोर-चौक बच्चों को बहुत प्यार करते थे। उन्होंने बच्चों को ध्यान से देखा और समझा। चूंकि वे बच्चों को जानते थे, इसलिए उन्होंने उन्हें आदर्श नहीं समझा। जैसे बड़े लोग अच्छे और बुरे होते हैं, वैसे ही बच्चे भी हर तरह के होते हैं। सारी ज़िन्दगी उनके लिए और उनके बीच रहने व काम करने से कोर-चौक बच्चों को बच्चों की तरह देख सकते थे।

कोर-चौक हमारी शिक्षा व्यवस्था की आलोचना करते थे जो कि आज की तरह उस ज़माने में भी बच्चों को बहुत-सी बेमतलब की जानकारी के भार से दबा कर रखती थी; जबकि शिक्षा का मूल उद्देश्य होना चाहिए बच्चों को इस बात के लिए तैयार करना कि वे अपने वर्तमान यथार्थ को एक बेहतर भविष्य में बदल पाएं।

कोर-चौक को कोई शक नहीं था कि वयस्कों और बच्चों के बीच में शक्ति का संतुलन बिल्कुल गलत है, उसे बदलने की ज़रूरत है। वयस्क यह मान कर चलते हैं कि यह उनका अधिकार है कि वे बच्चों का जीवन और भविष्य निर्धारित करें; वह भी बच्चा क्या चाहता है यह जाने बगैर। कोर-चौक यह मानते थे कि वही शिक्षा जो बच्चों की पसन्द को ध्यान में रखती है, एक बेहतर विश्व का निर्माण कर सकती है। उनका इस बात में गहरा विश्वास था कि हर बच्चा अपना अंदरूनी संतुलन बनाए रखने के लिए खुद-ब-खुद अपने को जितना हो सके बेहतर बनाने की कोशिश करता है – अगर उसे अवसर मिले, स्वतंत्रता मिले और मौका मिले। बच्चों को यह अवसर देना उनका मुख्य उद्देश्य था।

कोर-चौक की तरह जो लोग बच्चों के लिए एक बेहतर विश्व का निर्माण करने की कोशिश करते हैं वे सामान्यतः अपने खुद के उदास बचपन की याद से प्रेरित होते हैं। जो उत्पीड़न उन्हें सहना पड़ा है इसका ऐसा असर उनके

जीवन पर पड़ता है। वे सारी ज़िन्दगी इस कोशिश में लग जाते हैं कि दूसरे बच्चों को वैसा ही कष्ट न झेलना पड़े।

बचपन – हेनरिक गोल्डश्मिट

यानुस कोर-चौक का असली नाम हेनरिक गोल्डश्मिट था। वे एक सुसंस्कृत और सुशिक्षित यहूदी खानदान से थे, एक ऐसा परिवार जिसने पोलिश समाज में मिल जाने के लिए यहूदी परंपरा से खुद को अलग कर लिया था। कोर-चौक के दादाजी एक प्रसिद्ध चिकित्सक थे, उनके पिताजी उतने ही प्रसिद्ध वकील थे। ऊपर से देखने पर ऐसा लगता है कि हेनरिक का बचपन अपने अमीर मां-बाप के घर पर काफी सुख चैन से गुज़रा। लेकिन बचपन से ही वे संवेदनात्मक समस्याओं से परिचित थे। उनके पिता अव्यवहारिक किस्म के व्यक्ति थे और सामान्य दुनिया के साथ जुड़ने में उन्हें काफी मुश्किल होती थी।

जब हेनरिक छोटे थे, तब हालांकि सतही तौर पर सब कुछ ठीक होना चाहिए था, तब भी उनका परिवार मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक और सामाजिक दृष्टि से अलगाव का सामना कर रहा था। शायद उनके पिता की मानसिक अस्थिरता का यही कारण था। जन्म से यहूदी, हेनरिक के मां-बाप को वह पोलिश संस्कृति भी नहीं अपना सकी जिसे उन्होंने स्वीकार किया था। साथ ही खुद को पोलिश संस्कृति का हिस्सा बनाने की फिराक में वे यहूदियों से भी दूर चले गए थे। पोलैंड में रहने वाले लगभग सभी यहूदी यिड्डिश भाषा बोलते थे और उनका जीवन यहूदी धार्मिक परंपराओं से निर्धारित होता था। वे जो कुछ भी सोचते और करते थे उस पर धर्म की छाप होती थी।

दूसरी तरफ हेनरिक के माता-पिता यहूदी धर्म को न मानने वाले यहूदी थे, जो सिर्फ पोलिश बोलते थे। इसलिए हालांकि हेनरिक की अच्छी परवरिश हुई लेकिन वह बचपन से ही 'अलग होने' का मतलब जानते थे। वे सारी ज़िंदगी एक 'आउटसाइडर' ही रहे।

जब हेनरिक ग्यारह वर्ष के थे तो उनके पिताजी को मानसिक रोग से पीड़ित होने की वजह से मानसिक रोगों के अस्पताल में रखना पड़ा। वहीं पर उनकी मृत्यु हो गई। तब हेनरिक की उम्र अठारह वर्ष थी। पिता की मौत के बाद परिवार को आर्थिक तंगी से गुज़रना पड़ा। तभी से हेनरिक को परिवार की देखभाल करनी पड़ी। स्कूल में पढ़ते वक्त वे ट्यूशन करके अपना खर्च चलाते थे। जब कॉलेज में पहुंचे तो कहानियां और लेख लिखकर वे बहन, मां और खुद का खर्च चलाते थे।

इसी काल में उन्होंने खुद के लिए एक नया नाम अपनाया। एक

साहित्यिक प्रतियोगिता में हिस्सा लेने के लिए उन्होंने यह पोलिश नाम इसलिए अपनाया क्योंकि उन्हें डर था कि उनके यहूदी नाम के चलते कोई पुरस्कार नहीं मिलेगा। यानुस कोर-चौक नाम उन्होंने एक उपन्यास से लिया था जो कि वे उन दिनों पढ़ रहे थे। हालांकि वे उस साहित्यिक प्रतियोगिता को नहीं जीत पाए लेकिन यह नया नाम इस्तेमाल करते रहे।

भविष्य के सपने

इस समय तक हालांकि वे चिकित्सा शास्त्र की पढ़ाई कर रहे थे लेकिन उन्होंने यह निश्चित कर लिया था कि वे बच्चों की बेहतरी के लिए काम करेंगे। कोर-चौक बच्चों की स्वतंत्रता के लिए कृत-संकल्प थे; क्योंकि बच्चों के साथ बड़े जिस तरह का व्यवहार करते थे उसमें भी आमूल परिवर्तन की ज़रूरत थी। जब कोर-चौक से यह पूछा गया कि बच्चों की स्वतंत्रता का क्या मतलब होता है तो उन्होंने बताया कि इसका सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा होगा बच्चों को खुद का जीवन चलाने की स्वतंत्रता देना। इस शुरुआती दौर में भी वे निश्चित थे कि बच्चे खुद की ज़िंदगी कम-से-कम उतने अच्छे से तो चला ही सकते हैं जितने कि माता-पिता या शिक्षा -विद।

अपनी पढ़ाई के दौरान कोर-चौक को यह महसूस हुआ कि वे बच्चों की देखभाल 'बच्चा रोग विशेषज्ञ' होकर अच्छे से कर पाएंगे, इसलिए उन्होंने इसकी पढ़ाई की। कोर-चौक शुरू-शुरू में ही यह निश्चित कर चुके थे कि वे विवाह नहीं करेंगे क्योंकि वे अपने बच्चे नहीं चाहते थे। जब कॉलेज के मित्रों ने उनसे पूछा कि बच्चों से इतने प्यार के बावजूद वे अपने बच्चे क्यों नहीं चाहते, तो उनका जवाब था कि उनके कुछ नहीं बल्कि सैकड़ों बच्चे होंगे जिनकी वे देखभाल करेंगे।

पहला उपन्यास

एक मेडिकल छात्र के रूप में कोर-चौक वारसा की झुग्गी-झोंपड़ी वाली बस्तियों में काम किया करते थे। उन्हें उम्मीद थी कि वे बच्चों के आध्यात्मिक विकास के साथ मेडिकल चिकित्सा व शारीरिक इलाज के द्वारा उनके जीवन में मूलभूत परिवर्तन ला पाएंगे। उनका पहला उपन्यास 'गली के बच्चे' 1901 में छपा। यह उपन्यास अमानवीय जीवन जीने को मजबूर बच्चों का जीवन के प्रति आक्रोश व्यक्त करता है।

सन् 1905 में मेडिकल डिग्री पाने के बाद कोर-चौक बच्चों के एक अस्पताल में काम करते हुए रहने लगे। साथ-साथ वे साहित्यिक, मेडिकल और सामाजिक-आर्थिक विषयों पर लेखन का काम भी करते थे। उनका एक और उपन्यास 'द चाइल्ड ऑफ द सेलोन' उनके अपने अनुभवों पर

आधारित था। उपन्यास में उन्होंने ऐसे सवाल उठाए जो उनके मन में पांच साल की उम्र से ही उठ रहे थे; जब उन्होंने समझा था कि रुपये-पैसे ही नहीं होने चाहिए, तब शायद कोई भूखा नंगा बच्चा नहीं होगा।

जब 1905 में रूस और जापान के बीच लड़ाई छिड़ गई तब कोर-चौक को सेना में डॉक्टर का काम करना पड़ा। यह अनुभव उन्हें काफी बुरा लगा लेकिन इस अनुभव ने उन्हें गरीब जनता के और भी करीब ला दिया। अगले आठ वर्षों में धीरे-धीरे उन्होंने डॉक्टरी का पेशा छोड़ दिया जिससे कि वे अपना सारा समय बच्चों के साथ गुज़ार पाएं। उन्होंने अपने जीवन में आए इस बदलाव के बारे में यह लिखा 'अरंडी के तेल का एक चम्मच गरीबी और मातृ-पितृ-हीनता का इलाज नहीं हो सकता।'

इसलिए 1912 में तीस साल के आसपास की उम्र में कोर-चौक वारसा में यहूदी अनाथालय के निदेशक बन गए। उन्होंने बच्चों के अस्पताल में काम बंद कर दिया। उसके बाद से अपने जीवन के अंत तक वे इसी अनाथालय में काम करते रहे। इसमें रोक सिर्फ एक बार आई जब उन्हें प्रथम विश्व युद्ध के दौरान रूसी सेना के लिए डॉक्टर का काम करना पड़ा। इस दौरान उनके पास खुद के लिए कोई समय नहीं बचता था। कठिन श्रम के इस जीवन में भी रात में सोने के बजाय, उन्होंने अपनी सबसे प्रसिद्ध पुस्तक 'बच्चे को कैसे प्यार करना चाहिए' लिख डाली।

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद वे एक कैथोलिक अनाथालय के भी सह-निदेशक बन गए जिसका नाम उन्होंने 'अपना घर' रखा। इसमें यहूदी और कैथोलिक बच्चे रहते थे। बच्चों पर कोर-चौक के ज़्यादातर लेख इस बात को समझने की कोशिश करते हैं कि बच्चों को कैसे समझा जाए और उनसे कैसे जुड़ा जाए, कैसे उनका सम्मान किया जाए और कैसे उन्हें प्यार किया जाए। उनके लेख बच्चे के बदलते हुए व्यक्तित्व की सजीवता को दिखाते हैं।

वारसा के एक इंस्टीट्यूट में पढ़ाने के लिए वे अपने छात्रों को एक्स-रे मशीन के द्वारा बच्चे के दिल की धड़कन दिखाते थे। बच्चा एक अंधेरे कमरे में स्क्रीन के पास खड़ा होता था और इस अनजानी जगह पर वह अंधेरे, अजीबो-गरीब मशीन और अजीबो-गरीब जगह के चलते, डरा रहता था। हल्की आवाज़ में (बच्चे को बिना और ज़्यादा डराए) अपने छात्रों को ध्यान से देख यह कभी न भूलने को कहते हुए बताते थे, "देखो जब बच्चा डरा रहता है तो कैसे तूफान की तरह उसका दिल धड़कता है, और यदि कोई बड़ा उस पर गुस्सा हो जाए तब वह और तेज़ी से धड़कता है, और सज़ा के डर

की तो बात ही मत करो।"

नई धारणाएं

कोर-चौक की कई धारणाएं आज सर्वसम्मत हैं लेकिन बीसवीं सदी की शुरुआत में क्रांतिकारी रूप से नई थीं। उन्होंने बार-बार इस बात की ज़रूरत पर बल दिया कि बच्चे को और उसके विचारों को आदर देना चाहिए, तब भी जब आप उससे सहमत न हों। उन्होंने ऐसे शैक्षिक हस्तक्षेप को गलत बताया जो हमारी इस समझ पर आधारित है कि बच्चे को भविष्य में क्या जानना चाहिए। सच्ची शिक्षा बच्चे के वर्तमान पर आधारित होगी न कि इस बात पर कि भविष्य में वह क्या हो।

हम आज यह नहीं समझ पाते कि ये आधुनिक सिद्धांत किस हद तक कोर-चौक के विचारों से निकले हैं। इनमें से कुछ विचार ड्यूयी जैसे शिक्षाविदों ने भी व्यक्त किए थे। लेकिन जहां ड्यूयी सिर्फ सिद्धांत देते रहे कोर-चौक ने इन विचारों को दिन प्रतिदिन के जीवन में उतारने की कोशिश की।

इसी तरह समरहिल के नील ने भी अपने परीक्षण लगभग दस साल बाद शुरू किए। नील की समझ भी कोर-चौक के विचारों से प्रभावित थी। लेकिन नील भी, जो बच्चों की शिक्षा के क्षेत्र में सबसे क्रांतिकारी बदलाव लाना चाहते थे, कोर-चौक जितना आगे नहीं बढ़े। कोर-चौक यह मानते थे कि बच्चे खुद अपने ऊपर शासन करें। कोर-चौक की सहायता से बच्चों ने एक कोर्ट बनाया और वे खुद भी उसके निर्देशों को मानते थे।

बच्चों का कोर्ट

कोर-चौक इस बात को समझते थे कि बच्चों के प्रति बहुत लगाव होने पर भी, वे खुद एक त्रुटिपूर्ण प्रक्रिया से पाले पोसे गए थे, इसलिए उनमें कमियां थीं। इसलिए व्यक्तिगत रूप से उनके लिए बच्चों की संसद, अखबार या अन्य स्वतंत्र गतिविधियों से भी ज़्यादा महत्वपूर्ण था उनका कोर्ट। उन्होंने बताया है कि छः महीने में पांच बार उनके खिलाफ शिकायत हुई। एक बार भावना में आकर उन्होंने एक बच्चे को थप्पड़ मारा जब उसने उन्हें बहुत परेशान किया। उन्होंने फौरन अपनी गलती स्वीकार की कि बच्चे का व्यवहार कितना भी बुरा क्यों न हो उसे थप्पड़ नहीं मारा जा सकता। उनका दूसरा दुर्व्यवहार था एक शोर मचाने वाले बच्चे को सोने वाली जगह से बाहर निकाल देना जिससे कि दूसरे बच्चों की नींद में खलल न पड़े। उनका दोष था – बच्चों के लिए खुद निर्णय ले लेना। उन्हें बच्चों से पूछना चाहिए था कि क्या वे एक बच्चे को भगाकर सोना चाहेंगे। एक दूसरे मौके पर बच्चों के कोर्ट ने उन्हें दोषी करार दिया

क्योंकि उन्होंने मुकदमे के समय एक बाल-न्यायाधीश का अपमान किया था। एक और मौके पर उन्होंने एक लड़की को चोर कहा था।

एक बाल-न्यायाधीश ने पांचवे मुकदमे के बारे में खुद के अनुभव लिखे हैं। कोर-चौक ने मज़ाक में एक बच्ची को पेड़ के ऊपर बैठा दिया, जब वह डर गई तो उन्होंने उसका मज़ाक उड़ाया था। बच्चों की कोर्ट की धारा 100 के तहत कोर-चौक को दोषी पाया गया। जजों का निर्णय था, "हालांकि मुज़रिम ने न कोई सफाई दी है, न ही अपने व्यवहार को सही करार दिया है, कोर्ट उन्हें दोषी ठहराता है।" जैसे ही यह फैसला सुनाया गया, जिस लड़की ने कोर-चौक पर यह आरोप लगाया था, रोते हुए उनके गले से लिपट गई।

ऐसी व्यवस्था में हम यह न समझ लें कि अनाथालय का जीवन काफी उल्टा-पुल्टा था। बच्चों का स्वशासन और कोर्ट, व्यवस्था को बनाए रखते थे। कोर-चौक जानते थे कि अच्छा जीवन जीने के लिए सबसे आवश्यक होता है स्वशासन।

'बूढ़ा डॉक्टर' न सिर्फ बच्चों के निर्णय को कोर्ट में स्वीकार करता था, बल्कि वे जो भी करते थे उसमें बच्चों की राय जानना चाहता था। वे अपनी किताबों से पढ़कर सुनाते थे और उनकी राय मांगते थे, जिसे वे काफी महत्व देते थे। उन्होंने कहीं लिखा है कि बच्चे उनके सबसे बड़े शिक्षक थे और उन्होंने जो भी कुछ सीखा था उन्हीं से सीखा था।

कोर-चौक का जीवन दर्शन अनाथालय के बच्चों के पास हो जाने के समय उनके विदाई भाषण में स्पष्टत: झलकता है। उन्होंने कहा:

"हम आप सब को दूर देश के लंबे सफर के लिए विदा देते हैं। यह सफर है जीवन का सफर। हम बहुत सोचते रहे कि हम आपको कैसे अलविदा कह पाएंगे, सफर पूरा होने के लिए क्या सलाह देंगे। दुर्भाग्य से हमारी बातें बताने के लिए शब्द कमज़ोर पड़ जाते हैं। इसलिए हम रास्ते के लिए कुछ भी नहीं कह पाते।

हम तुम्हें कोई ईश्वर नहीं देते क्योंकि उन्हें तो आप एकाकी संघर्ष के बाद खुद की आत्मा में खोज पाएंगे। हम आपको कोई मातृभूमि भी नहीं दे रहे क्योंकि वह तो आपको खुद के दिल से पूछकर अपनी सोच के आधार पर खोजकर निकालना है। न ही हम आपको आम लोगों के लिए प्यार का रास्ता दिखाते हैं क्योंकि बिना क्षमाशीलता के प्यार नहीं हो सकता और क्षमा करना मेहनत का काम है, जिसके बारे में व्यक्ति खुद ही निर्णय ले सकता है।

हम आपको सिर्फ एक चीज़ देते हैं

– एक इच्छा, बेहतर जीवन के लिए; ऐसा जीवन जो अभी है नहीं लेकिन एक दिन आएगा। एक जीवन जो सत्य और न्याय पर आधारित होगा। शायद यही इच्छा आपको ईश्वर तक, असली मातृभूमि तक और प्यार तक पहुंचाएगी। इसे मत भूलो।"

दूसरे बच्चों और बड़ों का घातक अकेलापन दूर करने के लिए उन्होंने एक उपन्यास लिखा 'जब मैं दुबारा छोटा हो जाऊंगा'। इस किताब में वे एक साथ एक बड़े और छोटे के रूप में, शिक्षक और छात्र के रूप में लिखते हैं, जिसमें वे एक दूसरे की समस्याएं, खुशियां और गम समझने की कोशिश करते हैं। लेकिन यह पुस्तक अपने प्रयोजन में उतनी सफल नहीं हुई जितनी कि उन्हें उम्मीद थी।

मशहूर पुस्तक – राजा मैट प्रथम

इसलिए कोर-चौक ने एक बार फिर कोशिश की और उन्होंने अपनी सबसे प्रसिद्ध पुस्तक 'राजा मैट प्रथम' लिखी जो 1928 में छपी। 'राजा मैट प्रथम' की कहानी एक बच्चे की है जो अपने पिता की मृत्यु पर राजा बनता है। गद्दी पर बैठते ही वह कई तरह के सुधार लाता है जिससे बच्चों और बड़ों की हालत सुधरे।

राजा मैट एक बच्चे के रूप में कल्पित कोर-चौक ही है जो दुनिया में अन्याय के खिलाफ साहस से संघर्ष कर रहा है। खासकर ऐसे जुर्म के खिलाफ जो बच्चों पर ढाए जाते हैं। सारी कथा इस बच्चे के नज़रिए से कही जाती है जो हमेशा एक बच्चा होते हुए भी बड़ी हिम्मत के साथ अपने लक्ष्य को पाने की कोशिश करता है। हमारी जैसी दुनिया को दुबारा से बनाने की कोशिश करता है जो बच्चों के लिए अच्छी हो; वैसा करते हुए बड़ों के लिए भी एक बेहतर दुनिया बनाने की कोशिश करता है। इस कहानी में कोर-चौक एक वयस्क के रूप में भी आते हैं – एक बूढ़े डॉक्टर के रूप में जिसे राजा मैट को आने वाली मुसीबतों का पूर्वाभास है और जिसका दिल राजा मैट के लिए पसीजता है। बूढ़ा डॉक्टर राजा मैट की सहायता करने की असफल कोशिश करता है। उसकी दुनिया बच्चों की ज़रूरतों के लिए संवेदनशील है। दुनिया यह नहीं समझती कि बच्चों के लिए क्या सही है, न ही उनकी निश्छलता, न ही उनकी खुद की देखभाल करने की क्षमता, न ही इस बात को समझती है कि कैसे वे हम सबके लिए एक बेहतर विश्व बनाने में योगदान कर सकते हैं।

जो बात इस कथा को अनोखा बना देती है वह है बच्चों के चिंतन के बारे में इसकी खूबसूरत समझ, साथ-साथ उनकी तमाम योजनाओं की अव्यवहारिकता भी, जिसके चलते

अन्ततः वे असफल होते हैं। इस कथा में आधुनिक विश्व के सामान्य अस्तित्व के साथ काल्पनिक विश्व की सृष्टि की गई है, जो एक बेहद कुशाग्र बुद्धि के कल्पनाशील, सचेत और ईमानदार बच्चे की उम्मीदों और कल्पनाओं का परिणाम है।

'राजा मैट प्रथम' एक अनूठी किताब इसलिए है कि इसमें बच्चा बड़ों की दुनिया को कैसे समझता है यह दिखाने की कोशिश की गई है। साथ-साथ यदि वह स्वतंत्र हो तो उसकी प्रतिक्रिया कैसे होती है। मैट के अनुभवों के माध्यम से कथा यह दिखाती है कि किस तरह बच्चा बार-बार बड़ों पर विश्वास करता है और बार-बार हताश होता है। उपन्यास यह दिखाता है कि वयस्क लोग एक दूसरे के साथ कितना कुटिल व्यवहार करते हैं। साथ-साथ वह यह भी दिखाता है कि वे वयस्क जो अच्छे होते हैं, वे भी बच्चों की ज़रूरतों और उम्मीदों को नहीं समझ पाते। सबसे बड़ी बात यह है कि यह कथा बताती है कि बच्चों में दुनिया को समझने के लिए गंभीरता और भोली-भाली बुद्धिमता एक साथ मिले होते हैं; और उनमें बड़ों तथा हमउम्र बच्चों के साथ एक गहरे रिश्ते की ज़रूरत होती है, क्योंकि उन्हें ज़रूरत होती है कल्पनाओं के संसार की, स्वतंत्र, मर्यादापूर्ण और उत्तरदायी जीवन की।

राजा मैट के सुधारों की सूची काफी कुछ दर्शाती है। इन सुधारों में व्यक्तिगत कारणों से मुझे एक सुधार बड़ा पसन्द आया – बच्चों के बड़ों के द्वारा चूमे जाने पर रोक बनाना। मैंने कई वर्षों पहले कोर-चौक की बात जाने बिना, यह बात कही थी कि जहां भी बच्चे इस बारे में अपनी बात बताने की हिम्मत करते हैं, सब के सब इस बेमतलब के चूमे जाने से नफरत करते थे। लेकिन मेरा सुझाव बेहद नापसन्द किया गया। इस अनुभव ने मुझे सिखाया कि बड़ों को यह बताना कितना मुश्किल है कि बच्चे दुनिया को अलग ढंग से देखते हैं। साथ ही यह भी समझ में आया कि बड़े कितनी आसानी से अपना बचपन भूल जाते हैं।

ज़्यादातर वयस्क लोग बिल्कुल निश्चित हैं कि जो चीज़ उनके लिए प्यार जताने का एक तरीका है, बच्चों के लिए भी वो वही होगा। बच्चे शारीरिक संपर्क को पसन्द करते हैं, लेकिन वैसे रूप में नहीं जो वयस्क कामुकता का हिस्सा है जैसे चूमना – बल्कि वे पसन्द करते हैं प्यार से थामना, उठाना, गले लगाना आदि। अपने वक्तव्यों में कोर-चौक हमेशा बताते थे कि जब बड़े, बच्चों को वैसा प्यार जताते हैं जैसा बच्चे चाहते हैं तो वे बड़े खुश होते हैं; क्योंकि उन्हें लगता है कि बड़े उन्हें गंभीरता से ले रहे हैं और बराबरी के स्तर पर खेल रहे हैं।

कहानी खत्म होती है जब राजा मैट के बहुत मेहनत से लागू किए किन्तु बचकाना सुधार वयस्कों के विश्वासघात के चलते विफल हो जाते हैं; क्योंकि बच्चे आखिर बच्चे हैं, वे भी बचकानेपन में, बिना ध्यान दिए और कभी-कभी स्वार्थपन में योजना लागू करने की कोशिश करते हैं।

अलग-थलग पड़ते गए

कोर-चौक बच्चों से जितना हिलते मिलते गए, बाहरी दुनिया से उतना ही कटते गए। यह कहा गया कि उनके यहूदी माता-पिता ने जिस पोलिश संस्कृति को अपनाया था वह उनके लिए अजनबी थी। वे यहूदियों के लिए भी अजनबी थे क्योंकि उन्होंने पोलिश संस्कृति अपना रखी थी। यह अलगाव कोर-चौक को अपने माता-पिता से मिला था, इस वजह से पोलैंड के दक्षिणपंथी कोर -चौक को अतिवादी समझ कर संदेह की दृष्टि से देखते थे। पोलैंड के वामपंथियों से भी वे अलग-थलग पड़ गए क्योंकि वे सब कुछ भूलकर सिर्फ बच्चों की स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ रहे थे और यह नहीं मानते थे कि सर्वहारा क्रांति से बच्चों की हालत अपने आप ठीक हो जाएगी।

हालांकि साहित्य के क्षेत्र में उन्हें काफी सफलता मिली थी लेकिन वहां के साहित्यिक समूह भी उन्हें संदेह की दृष्टि से देखते थे, क्योंकि वे किसी साहित्यिक आंदोलन का हिस्सा नहीं थे, न ही उनसे उन्हें प्रेरणा मिली थी। उनकी प्रेरणा के स्रोत तो बच्चे थे। शिक्षाविद् उनसे घबराते थे और उनके तरीकों को अस्वीकार करते थे क्योंकि कोर-चौक उनकी प्रणाली को बिल्कुल गलत करार देते थे। इस वयस्क चक्र से अलग-थलग कोर-चौक बच्चों के और करीब आ गए – बच्चे जो बड़ों की दुनिया से अलग हो चुके थे। लेकिन कोर-चौक के समूचे जीवन का लक्ष्य जिसके लिए वे दिन रात कार्यरत रहे, बच्चों और बड़ों की दुनिया के दुराव को कम करना था।

घेट्टो डायरी

1939 में जब जर्मनी ने पोलैंड पर हमला किया तो कोर-चौक को पता चल गया कि अन्त नज़दीक है। उनकी उदासी और निराशा बढ़ती गई और उन्हें लगा कि उन्हें अपनी अन्तिम बातें लिख डालनी चाहिए। घेट्टो में अपने जीवन के अन्तिम दिनों, खासकर 1942 साल के मई से अगस्त महीने तक उन्होंने जो बातें लिखीं वे उनके शब्दों में, "वास्तव में यह अनेक प्रयोगों के निष्कर्ष निकालने का प्रयास नहीं है बल्कि अनेक प्रयोगों, प्रयासों, गलतियों की कब्रगाह है। शायद पचास वर्ष बाद किसी को कभी इसमें कुछ काम का मिले।" यह एक भविष्यवाणी साबित हुई क्योंकि कुछ ही दिनों में

बूढ़े डॉक्टर के यह वाक्य पचास साल पुराने हो जाएंगे और अब उनकी बातें ज़्यादा लोगों को मालूम हैं, ज़्यादा लोग उसे समझते हैं और ज़्यादा लोग उसे पसन्द करते हैं।

जुलाई 1942 में कोर-चौक की हत्या के लगभग एक मास पहले उनके दोस्तों और शिष्यों ने उन्हें बचाने का एक और प्रयास किया। उनके मित्र इगोर न्यूअर्ली ने उनके लिए नकली कागज़ात तैयार कर लिए। इनकी सहायता से कोर-चौक घेट्टो से बाहर आ सकते थे। न्यूअर्ली की मनुहार पर भी कोर-चौक बच्चों को छोड़ घेट्टो से बाहर आने को तैयार नहीं हुए। लेकिन न्यूअर्ली के प्रयासों के लिए कृतज्ञता दिखाने के लिए कोर्याक ने घेट्टो में बिताए दिनों की अपनी डायरी उनके पास भेजने का वचन दिया।

हमेशा की तरह कोर-चौक ने अपना वचन निभाया और बच्चों के साथ ट्रेबलिंका ले जाए जाने के कुछ दिनों के बाद न्यूअर्ली के पास वह डायरी पहुंच गई। उन्होंने वह डायरी एक जगह ईंटों की चिनाई करके रख दी और युद्ध खत्म होने के बाद उसे फिर से निकाला। यह 'घेट्टो डायरी' के नाम से छपी है और 'राजा मैट्ट' के अलावा अंग्रेज़ी भाषा में उपलब्ध कोर-चौक की एकमात्र किताब है।

डायरी में कोर-चौक बताते हैं कि घेट्टो के दर्शकों के लिए उन्होंने अपने पूरे ग्रुप की हत्या के ठीक पहले बच्चों से अन्तिम बार कौन-सा नाटक करवाया। हालांकि आर्य लेखकों के नाटक यहूदी लोगों द्वारा किए जाने पर रोक थी, जो नाटक चुना गया वह था टैगोर का 'पोस्ट ऑफिस'। हमेशा की तरह कोर-चौक ने जर्मन पुलिस द्वारा नियम तोड़ने के लिए सज़ा की संभावना को नज़रअंदाज़ कर दिया था। इस कथा का नायक एक मरणासन्न बच्चा है जिसका मरना उसके लिए इसलिए सहज हो जाता है कि उसे यह विश्वास दिलाया जाता है कि राजा उससे मिलने आएंगे और राजा उसकी सबसे प्रिय आकांक्षा पूर्ण करेंगे। कोर-चौक ने इसी कारण से यह नाटक चुना होगा क्योंकि वे बच्चों के लिए मौत के इंतज़ार की दुःसह पीड़ा को कम करना चाहते थे। नाटक के बाद उनसे पूछा गया कि उन्होंने क्यों यह कहानी चुनी, तो उन्होंने बताया कि अन्ततः हर व्यक्ति को मौत के फरिश्ते को स्वीकार करना पड़ता है।

कोर-चौक ने यह सीख लिया था और उन बच्चों को भी उन्होंने यह सीख दी। अपनी घेट्टो डायरी के अन्तिम पन्ने पर उन्होंने लिखा है, "मैं किसी पर गुस्सा नहीं हूं, मैं किसी का बुरा नहीं चाहता क्योंकि मुझमें यह क्षमता नहीं है। मुझे पता नहीं किसी का बुरा कैसे मनाया जा सकता

है।" उनसे जब यह पूछा गया, "जब सब लोग अमानुषिक हो गए हों तो इंसान को क्या करना चाहिए?" उनका जवाब था, "उसे और ज़्यादा मानवीय हो जाना चाहिए।" अंत तक कोर-चौक ने यही किया।

दूसरे विश्वयुद्ध के बाद यानुस कोर-चौक, उनका जीवन और उनकी रचनाएं न सिर्फ पोलैंड में, बल्कि दूसरी जगहों पर भी चर्चा के विषय बन गए। उनकी रचनाएं यूरोप के विश्वविद्यालयों में पढ़ाई जाती हैं और उनके कार्यों पर बड़ी-बड़ी गोष्ठियां आयोजित होती हैं। उनके सम्मान में कई इमारतें बनाई गई हैं। 'कोर-चौक और बच्चे' नाम का एक नाटक भी कई जगहों पर दिखाया गया है। उनकी किताबों के ऊपर किताबें लिखी गई हैं। उनकी रचनाओं को दुबारा छापा गया है और कई भाषाओं में उनका अनुवाद भी हुआ है। उन्हें मरणोपरान्त जर्मनी का शान्ति पुरस्कार दिया गया। यूनेस्को ने जन्म शताब्दी पर 1978-79 को कोर्याक का वर्ष घोषित किया।

ट्रेबलिंका में 8,40,000 यहूदियों की हत्या की गई थी। जहां उन्हें मारा गया था वहां पर लगे खंडित पाषाण उनकी याद के स्मारक हैं। इन पत्थरों पर इसके सिवाय कुछ भी नहीं लिखा कि मारे गए लोग किस शहर या किस देश से आए थे। सिर्फ एक शिलालेख है जिस पर लिखा है "यानुस कोर-चौक (हेनरिक गोल्डश्मिट) और बच्चे।" मुझे लगता है कि कोर-चौक आज के दिन इसी रूप में याद किया जाना पसन्द करते, बच्चों के सबसे अच्छे दोस्त।

यह लेख ब्रुनो बेटेलहाइम की पुस्तक 'रिफलेक्शन्स एंड रिकलेक्शन्स' में दी गई यानुस कोर–चौक की जीवनी पर आधारित है।

अनुवाद व रूपांतरण: पी. के. बसंत। दिल्ली के जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय में इतिहास पढ़ाते हैं।